Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
July-December 2023 4(2), 4239–4242

TRIBAL SOCIETY IN CONTEMPORARY HINDI NOVELS: STRUGGLES, ISSUES AND SOCIAL REALITY

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी समाज: संघर्ष, समस्याएँ और सामाजिक यथार्थ

Dr. Anitha.P.L [1]

[1] Assistant Professor, Department of Hindi, Maharaja's College, Ernakulam

DOI
10.29121/shodhkosh.v4.i2.2023.4616

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: With social change and development, it has also been observed that the progress of every society impacts all its sections. In Indian society, the tribal community is one that continues to struggle to protect its identity and resources. This struggle is not only economic but also social, cultural, and political. Serious questions are still being raised about the extent to which various developmental changes have affected the tribal community. Issues such as casteism, exploitation, and social discrimination persist in tribal society, and these challenges are effectively depicted in contemporary literature and novels.

Hindi: समाज में परिवर्तन और विकास के साथ-साथ यह भी देखा गया है कि हर समाज की प्रगति का असर उस समाज के प्रत्येक वर्ग पर पड़ता है। भारतीय समाज में आदिवासी वर्ग वह है जो अपनी पहचान और संसाधनों की रक्षा के लिए लगातार संघर्ष कर रहा है। यह संघर्ष केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक भी है। आदिवासी समाज पर आए विभिन्न विकासात्मक बदलावों ने उन्हें किस हद तक प्रभावित किया है, इस पर आज भी गंभीर प्रश्न उठ रहे हैं। आदिवासी समाज में जातिवाद, शोषण, और सामाजिक भेदभाव की समस्याएं बनी हुई हैं, जिनका चित्रण समकालीन साहित्य और उपन्यासों में भी बखूबी किया गया है।

Keywords: Development - Social And Cultural Advancement - Casteism - Discrimination And Exploitation Among Different Castes - Economic Exploitation Of Weaker Sections - Mental Exploitation - Physical Exploitation - Class Division – Inequality Among Different Classes - And The Situation Of Exploitation Among Various Classes, विकास - सामाजिक और सांस्कृतिक उन्नति - जातिवाद - विभिन्न जातियों के बीच भेदभाव और शोषण की प्रवृत्ति - कमजोर वर्गों का आर्थिक शोषण - मानसिक शोषण -,शारीरिक शोषण - वर्गभेद -विभिन्न वर्गों के बीच असमानता - विभिन्न वर्गों के बीच शोषण की स्थिति।

1. प्रस्तावना

समाज परिवर्तनशील और विकासोन्मुखी है। विकास के विविध आयाम समाज व्यवस्था को प्रभावित करते है। यह तो सत्य है कि विकास मनुष्य केलिए है लेकिन विकास किसी के सामाजिक जीवन में रुकावट डाले तो वह विकास नहीं बल्कि विनाश हैं। पुराने समय से लेकर भारतीय समाज में अनेक समस्याएं रहीं हैं, कई सुलझ गयी तथा कुछ नई समस्याएँ बनी है। आदिवासियों के बीच अनेक

समस्याएं मौजूद हैं। ये सिर्फ एकदिन में पैदा हुए समस्याएं नहीं है। पुराने समय से लेकर उन्हें सतानेवाली स्मसयाएं हैं। यह भी नहीं ये समस्याएं एकप्रकार की नहीं बल्कि अनेक प्रकार की हैं।

मानव अपनी विभिन्न जैविक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ती केलिए सामाजिक व्यवस्था और सामाजिक समूहों का निर्माण किया। इन्हीं समूहों से समाज और संस्कृति का निर्माण हुआ। इन्हीं समूहों से समाज और संस्कृति की प्रगति होती है। समाज, सामाजिक समूह में रहकर मानव अपनी समस्याएँ निपटना चाहता है। आदिवासी केन्द्रित उपन्यासों में उपन्यासकार उनके जीवन की जटिलताओं का चित्रण और विश्लेषण बहुत अच्छे ढंग से किया है।

2. आदिवासी समाज का संघर्ष

विकास प्रगति का प्रमाण होने के साथ-साथ मानव जीवन पर प्रभाव डालनेवाली प्रक्रिया भी है। यह कहा जाता है मानव ने अपनी भौतिक प्रगति की है। परन्तु उसके पाँव जमीन से ऊपर रहे है, मिट्टी या भूमि से उसका रिश्ता टूट चुका है। बढ़ती आबादी, औद्योगिकरण, नगरीकरण, ठेकेदारों, पूँजीपतियों, मिल मालिको की निगाहे जंगल-पहाड़ी अंचलों की ओर गई। कम दामों में या कभी आतंक, पिटाई जैसे आमानवीय अस्त्रों के बलपर आदिवासियों की जमीन हड़पने का कार्य हो रहा है।बिखरा हुआ आदिवासी सभा, राजनीतिक नेता का अभाव, कानून की अज्ञानता होने के कारण उन्हें फंसाया जा रहा है। जंगल, जमीन, जीविका का साधन है, आज उसे ही छीनने का प्रयास हो रहा है। इसप्रकार समकालीन आदिवासी उपन्यासकार आदिवासियों के विभिन्न समस्याओं को अपने उपन्यास में दर्ज कराने का प्रयास किया है। आदिवासी समाज अविकसित अंचलों का निवासी है। भौतिक साधनों का अभाव, यातायात की कमी, सामान्य स्तर की मानसिकता उनकी ज़िन्दगी है। इसी तरह आदिवासियों के जीवन से जुड़ी अन्य अनेक समस्याएँ भी है जैसे अन्धविश्वास की समस्या, शोषण की समस्या, जातीय भेदा-भेद की समस्या, वर्गगत समस्या, अज्ञान एवं अशिक्षा की समस्या, धर्मान्तरण की समस्या, खानखदान की समस्या, विस्थापन की समस्या आदि।इनमें सबसे भीषण समस्या जातिगत और वर्गगत समस्या है । मनुष्य सामाजिक प्राणी है। प्राचीनकाल से भारतीय समाज अनेक जाति एवं वर्गों में विभाजित हैं। भारतीय समाज में मनुष्य का व्यवसाय जातीय आधार पर बंटा हुआ है। अनुसूचित और और जनजाति के बीच जातीय कट्टरता आधिक पायी जाती हैं। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों का शोषण करते है। उच्च जातियता का अहं जितने काल तक उनके अन्दर होगा उतने काल तक निम्न जातियों को यातनाएं सहना पडेगा।

3. जातिगत और सामाजिक समस्याएँ

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में चित्रित कबूतर जाति एक ऐसी ही जनजाति है जो समाज से बिलकुल अलग थलग है। उच्च जाति के लोग इनके डेरों के आसपास तक नहीं फटकना चाहते। जो इन लोगो से मतलब रखता है उसे उसका समाज कोई भाव नहीं देता। मंसाराम ऐसा ही पात्र है। वह जाति से कज्जा है लेकिन जब उसका आना जाना कबूतरी बस्ती में हो जाता है तब से उसकी इज्जत दो कौड़ी की रह जाती है। उच्च जाति के लोग नाच जाति के लोगों को पीपल के पेड़ तक छूने नहीं देते क्यों कि उनका विश्वास है कि पीपल में देवी-देवता वास करते हैं। राणा प्यास से तड़पते रहने पर भी उसे स्कूल का नल छूने की आज्ञा नहीं थी। उससे तालाब का पानी पीने को कहा। तालाब में तो कज्जा लोगों के बच्चे टट्टी-पेशाब फेंकते हैं। उच्च जाति के लोगों की हरकत तो बड़ा दर्दनाक है। जब राणा पर कुत्ता झपड़ पड़ा तब गांव में हल्ला होगया। लोगों ने समझा कबूतरा कुत्ते से लड़कर नट की तरह तमाशा दिखा रहा है। किसी ने पैसा फेंकी, किसी ने ताली बजाई और किसी ने कुत्ते को शाबाशी देने नगा। राणा को उठाकर मंसा डेरे पर ले जाना चाहता था, लेकिन समाज के डर से वह कुछ न कर सका। राणा मंसा का अवैध संतान था। "कबूतर जाति भोले पंछी के समान है जिनके न घोंसले, न घर, सर्दी, गर्मी, बरसात दूसरों का मूँह देखता रहता है।"1 केहर सिंह अपने ठेके की रोनक बढ़ाने केलिए कबूतरी लड़कियों को ठेके में रखा है। तत्थू जाति से मेहतर है जब उनके हाथ से चाय पीने पर धीरज हिचकता जरूर है। क्यों कि पढे लिखे होने पर भी उसके अन्तर में कज्जा जाति का पुकार है और साथ ही बचपन से ही छुआछूत चिपका दिया है। इन कबूतराओं के डेरे गांव के बाहर होते हैं। गांव में घुसना इनकेलिए निषेध है। उच्च जाति के लोग ये भूल जाते हैं कि कबूतर जाति के लोग भी मनुष्य हैं।

'पार' आदिवासी जीवन के व्यथा संसार पर केन्द्रित एक स्वतंत्र उपन्यास तो है ही परिवेश और प्रस्थान बिन्दू की समानता के चलते वीरेन्द्रजैन के पूर्व उपन्यास डूब के पूरक भी है, और आगे का इतिवृत्त भी। गांव में कैलाश ने यह प्रचरित किया कि रामदुलारे बसेर की औलाद है, इसलिए उनकी पत्नी ठाकुरानी होने पर भी नीच हो गई है। कोई भी ठाकुराइन के साथ संसर्ग नहीं रखते हैं। यशस्विनी को कुएँ से पानी तक छूने का अधिकार नहीं देता। छुआछूत का संप्रदाय फिर से पैठने की कोशिश में है कैलाश । जाति का नाम बताकर लडैया गांव वालों को ही नहीं बल्कि वहाँ के आदिवासी राउतों को भी बहुत कष्टताएं झेलनी पड़ती हैं।

बिहार और झारखंड़ में आज भी जातिवाद चरम सीमा पर है। इसका जिक्र राकेश कुमार सिंह ने अपने उपन्यास 'जहाँ खिले है रक्त पलाश' में किया है। 'गगन घटा घहरानी' में रायसाहब लोगों को ज़िन्दगी भर के गुलामी बनाकर अपने पास रखते हैं। क्यों कि रायसाहब को मालूम था कि वे जंगली जाति होने के कारण सबकुछ बिना कुछ कहे छुप छाप सह लेंगे। डि.एस.पी के बेटे जुवेल ऊँचे जात के हैं इसलिए वह नीच जाति की स्त्रियों के साथ बत्तमीसी करता है। "गरीब की स्त्री उनके लिए सिर्फ भोग की वस्तु है। मनुष्य नहीं, मनुष्य तो केवल वही है।"2

'काला पादरी' में चित्रित उरांवों का हाल भी भिन्न नहीं है। इस देश के बड़े शहरों की जो सोसायटी है, उनमें आज भी उरांव जंगली जनजाति ही है। ईसाई होने पर भी उनकी ओर देखने का ढंग एक तरह से जंगलियों की तरफ देखने का ढंग है। उरांवों को पता नहीं उन्हें क्यों धर्म परिवर्तन करना पड़ता हैं। क्यों कि मूल रूप से वे जंगली जनजाति हैं, और धर्म परिवर्तन करने से पहले और बाद भी समाज में उनके लिये कोई स्थान नहीं है। "हम भले ही ईसाई बन गये हो, हमें ऐतराज नहीं, लेकिनमूलतः हम उराव है और उरांव होने के नाते वे उराव जिन्हों ने प्रभु यीशू के मार्ग को नहीं अपनाया है।"3

'धार' में शर्मा बाबू बांसगड़ा के संथाल जाति को इज्जत मिलाने केलिए बहुत कोशिश करते हैं, ताकि वे आदमी की तरह जिए। संथाल जाति की ज़िन्दगी की रूप रेखा इन वाक्यों से हमें मिलती हैं "पानी का पाइप हमारा छाती पर से गुज़रता, हमको एक बूंद पानी नई, रेल लाईन बगल में है, मगर हमरा खातिर सौ कोस दूर, वोट देने को हमको आज तक कोई बोला नई, हमरा चिट्ठी-पत्र निहाल सिंह के दूकान के पते पर आता। हमरा कोई पता ठिकाना नई।"4 बाहर के लोग इन्हें कंगाल घोषित करके दूर भागते हैं। ये लोग अब न जंगल के रहे न शहर के और न गांव के।

'जंगल जहाँ शुरू होता है' में थारू जनजाति की व्यथा कथा का वर्णन करते हुए लेखक ने डाकुओं के बीच में प्रचलित जाति व्यवस्था पर ज़िक्र किया है। परेमा पहले पंड़ित के दल का ही था, लेकिन था अहीर। अब जांत पांत के चलते उसने गद्दी को मारकर धर्म का नेता बन गया। ज्यादातर डाकू यादव थे। यानी रक्षक भी उसी जाति का भक्षक भी उसी जाति का। जब कोई अंचल, सामाजिक ईकाई अर्थात जाति खुद को असहाय पाती है तो विकल होकर शक्ति के अन्य स्रोतों की ओर भागती है, या क्रित्रिम स्रोत बनाती है। "किसी जाति विशेष को नीच या चोर प्रचारित करवा देना उसकी तेज को मार देने का अमोघ अस्त्र है चोरी को किसी जाति विशेष से जोड़ना।"5

आज प्रत्येक कार्य जातिय आधार पर होता है। जाति के नाम पर अलग अलग संगठन खड़े हो गये हैं। जाति आधार पर भेद भाव की भावना विकराल रूप धारण कर चुकी है। अन्य जातियों की तरह जनजातियाँ भी आज सामाजिक धारा से छिटकी हुई नजर आती है। इसे दिखाने का भरसक प्रयत्न समकालीन आदिवासी केन्द्रित उपन्यासों में हुआ है।

4. वर्गगत शोषण और दमन

वर्ग शोषण की प्रक्रिया मानव सभ्यता के प्रारंभ से हो चुकी है। अब यह साम्राज्यवादी शक्तियों के संरक्षण के केन्द्र बिन्दु बन चुका है। आज कर्म के आधार पर वर्ग निर्धारण न होकर जन्म के आधार पर मान्यता प्राप्त कर चुका है। जिसका सबसे अधिक लाभ सामन्तवादी वर्ग और सवर्ण जातियाँ उठा रही है। उसका सबसे अधिक दुष्प्रभाव और अत्याचार निम्न जातियाँ झेल रही हैं, जिसके कारण इनके स्थिति अत्यधिक दयनीय है।

'धार' में कोयला क्षेत्र में काम करनेवाले आदिवासी मज़दूरों की कथा संजीव ने सहानुभूति और सहृदयता के साथ कही है। बांसगड़ा इलाके में कोयला देखकर बस्ती में एक एक आने लगे। पंडितजी वह जगह कोयलौरी-ठो-नेशनलाइज़ हो जाने की घोषणा की। पंडितजी महेन्द्र बाबू के साथ मिलकर सारा कोयला हड़प लेना चाहते थे। इसलिए मैना कहती हैं कि बांसगड़ा में गीध की नज़र लग गयी है। "पहले इस जंगल में सियार, बनबिलाव, चूहों, खरगोशों, सांपों का बसेरा था, कुत्ते यदा-कदा पहुँचकर उनको परेशान करते। यह सारा कुछ अब भी है, सिर्फ जन्तुओं ने आदमी की शक्ल अख्तियार कर ली है। कोयले के दलाल, मज़दूर उनके बच्चे, कोल माफिया और यदा-कदा पुलिस ।"6 शर्मा मज़ाक में कहते हैं कि इस कोयले खज़ाने पर अमेरिका की तरह पंडित सीताराम काबिज है और लैटिन अमेरिका के एक छोटे राष्ट्र की तरह मैना। बसगड़ा गांव प्रायः उजाड़ हो चला था। अभी ज़्यादातर अवैध कोयला खनन गड्ढो में पानी भर जाने से बंद था। बासगड़ा के स्त्री पुरुष रात भर अवैध कोयला खनन के बाद दिन में सोते रहते हैं। चोरी से जो कोयला कटकर बेचते है इससे भी गुजारा न होने के कारण दूर दूर के ठेकेदार इन्हें सस्ती मज़दूरी पर काम केलिए ढोर डाँगरों की तरह हाँक ले जाते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि धान के खेत, इतनी कोलयरियाँ और छोटे से लेकर चित्तरंजन और कैबुल्स के बड़े कारखाने होते हुए भी इनकी ज़िन्दगी में कोई सुरक्षा नहीं है। अविनाश शर्मा बांगगड़ा के संथाल मज़दूरों के जीवन में परिवर्तन लाने केलिए 'जनखदान' शुरू करता है। शुरू में मज़दूर बिना मज़दूरी से काम करते हैं। जब कोयला मिलना शुरू होता है तो मज़दूरी के बदले में उनहें कोयला दिया जाता है जिसे वे शहर में बेचते है। धीरे धीरे मज़दूरों के जीवन में परिवर्तन आता है। जनखदान में मज़दूरों की सुविधा और सुरक्षा केलिए प्रबंध है। महेन्द्र बाबू और मारवाड़ी सेठ डोकनिया इसे खत्म करने को आमादा है। माफिया गुंड़ों और मज़दूरों के बीच लड़ाई होती है। खदान पर बुलडोजर चलाकर नाश किया जाता है। सरकार ने इन संथालों केलिए कुछ नहीं किया हैं। महेन्द्र बाबू एक ऐसा जोंक है जो संथालों के खून चूस-चूसकर बड़े हो गये। मैना और शर्मा का विश्वास है कि एक न एक दिन सरकार उनकी निष्ठा को स्वीकार करेगी।

'गगन घटा घहरानी' में लकडी काटनेवाले मज़दूरों का शोषण ठेकेदार करते हैं, सोनाराम लुपुंगा, सोनाहातू, मोरंगा के उरांवों को समझाता है कि यदि आदमी डर, भय निकाल देते तो वह कुछ भी कर सकते हैं। वह सबसे एक जुट होने को कहता है।ठेकेदार तुच्छ वेतन देकर मज़दूरों का शोषण करने पर रामधनीजी की नेतृत्व में सारा मज़दूर अनशन करते हैं। लड़ाई सिर्फ न्यूनतम मजदूरी को लेकर ही नहीं जमीन के मलिकाने को लेकर भी हो रही है। उनके अपने खेत में वे जोतते हैं लेकिन अपने लिए नहीं मालिक केलिए। अपने ही खेत से फसल चोरी करके दिन काटना भी पड़ता है। 'खेत जो होते-बोए उसका, जिसकी मेहनत उसीकी फसल' ये नारा रामधनीजी सबको समझाते हैं। ठेकेदार अपना काम करवाने केलिए दूसरे इलाके से आदिववासीयों को लेकर आते हैं। तब इलाके के मज़दूरों ने भी हड़ताल शुरू कि। यह हड़ताल किसी कारखाने की बड़ी बड़ी यूनियनों वाले खाते-पीते मज़दूरों की हड़ताल न थी, और यह हड़ताल अपने अपने घरों और झोपड़ियों में रहनेवाले खेतिहर किसान, मज़दूरों की हड़ताल भी नहीं थी। वह अकाल से त्रस्त होकर गांव घर छोड़कर अपना श्रम बेचने केलिए निकले अपनी मेहनत अपनी देह नीलाम करनेवाले ठेकेदार मज़दूरों की हड़ताल थी।

5. निष्कर्ष

आदिवासी समाज की समस्याएं केवल भौतिक और आर्थिक नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक भी हैं। जातिवाद, वर्गभेद, शोषण और धर्मान्तरण जैसी समस्याएं उन्हें विकास की मुख्यधारा से दूर रख रही हैं। आदिवासी उपन्यासों में इन मुद्दों का चित्रण इस बात को दर्शाता है कि समाज का हर वर्ग अपनी स्थिति को बदलने के लिए संघर्ष कर रहा है, लेकिन उन पर हो रहे अन्याय को समाप्त करने के लिए व्यापक बदलाव की आवश्यकता है। इन उपन्यासों के माध्यम से हमें यह समझने की आवश्यकता है कि जब तक समाज के अंतिम पंक्ति के लोग समान अधिकार और सम्मान नहीं प्राप्त करेंगे, तब तक वास्तविक विकास संभव नहीं है। आदिवासी समाज की समस्याएं न केवल उनके विकास के मार्ग में रुकावट डालती हैं, बल्कि यह पूरे समाज की नैतिक जिम्मेदारी भी है कि हम उनके अधिकारों की रक्षा करें और उन्हें सामाजिक न्याय प्रदान करें। समाज में व्याप्त असमानता और भेदभाव के खिलाफ संघर्ष करते हुए, आदिवासी समुदाय का जीवन बेहतर बनाने के लिए हमें उनके संघर्ष को समझना और उसका समाधान करना होगा।

संदर्भ

अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा
गगन घटा घहरानी, मनमोहन पाठक
कालापादरी, तेजिन्दर
धार, संजीव
जंगल जहाँ शुरू होता है , संजीव